International Journal of Applied Research 2023; 9(4): 211-214

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 8.4
IJAR 2023; 9(4): 211-214
www.allresearchjournal.com
Received: 15-02-2023
Accepted: 24-03-2023

राहुल पाण्डेय
शोधार्थी, हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

Corresponding Author:
राहुल पाण्डेय
शोधार्थी, हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

भक्तिकाल का उदय: सामासिक भारतीय संस्कृति का प्रतिबिम्ब

राहुल पाण्डेय

सारांश
भक्तिकाल के उदय के संदर्भ में विभिन्न भारतीय व पाश्चात्य विद्वानों ने अपने विचार प्रकट किए हैं। भारतीय विद्वानों का एक वर्ग भक्तिकाल का उदय पराजित मनोवृत्ति को माना है।दूसरा वर्ग भक्ति का मूल प्राचीन भारतीय स्रोतों में खोजने का प्रयास किया है।तीसरा वर्ग भक्ति का उद्गम द्रविडों से माना है।चौथा वर्ग भक्ति का उद्गम सामाजिक और आर्थिक प्रभाव में खोजने का प्रयास किया है।
वहीं पाश्चात्य विद्वानों ने भारत में भक्ति के उदय को ईसाई धर्म की देन कहा है।कुछ विद्वान भक्ति के उदय में अरबों का प्रभाव माना है।
इन सभी मतों के अध्यनोपरांत यह पता चलता है कि कोई एक निश्चित विचार भक्ति के उदय में जिम्मेदार नहीं है। अंततःहिंदी साहित्येतिहासकारों ने माना कि भक्ति आंदोलन भारतीय प्राचीन दर्शन और सांस्कृतिक परम्परा की अविच्छिन्न धारा के रूप में प्रस्फुटित हुआ है।और इस धारा का प्रस्फुटन आकस्मिक नहीं हुआ। इस आलेख में इसी दृष्टि से विचार किया गया है।

कूटशब्द: भक्तिकाल, मध्ययुग,प्राचीन सांस्कृतिक परम्परा, सामाजिक प्रभाव,आर्थिक प्रभाव, आंदोलन, पराजित मनोवृत्ति, द्रविडों,आध्यात्मिक श्रेठता,बाह्य आक्रमण की प्रतिक्रिया, पाश्चात्य विद्वान, प्राचीन दर्शन,भारतीय संस्कृति।

प्रस्तावना
ईस्वी सन की सातवीं शताब्दी से अद्यतन -काल तक अनवरत रुप से प्रवाहित हिंदी काव्यधारा में भक्ति का प्रवाह मन्दाकिनी की तरह अपनी निष्कलुष तरँगावली और अनन्त जनता के मन को नैसर्गिक शांति प्रदान करने वाली दिव्य जल-धारा की तरह पूजित है। रवि बाबू ने लिखा है-
"मध्ययुग में हिंदी के साधक कवियों ने जिस रस ऐश्वर्य का विकास किया उसमें असामान्य विशिष्टता है।वह विशेषता यह है कि एक साथ कवि की रचना में उच्च कोटि की साधना और अप्रतिम कवित्व का एकत्र मिश्रित संयोग दिखाई पड़ता है जो अन्यत्र दुर्लभ है।"
भक्ति काल की इस अप्रतिम और ऐश्वर्य मंडित काव्य को कई विद्वान पराजित मानसिकता का परिणाम बताते हैं जबकि दूसरे कुछ विद्वान इसे एक अविछिन्न सांस्कृतिक, धार्मिक एवं सामाजिक भावना का परिणाम मानते हैं। इनके लिए यह एक आंदोलन है और महाआंदोलन है जो कि भारती साधना के इतिहास में अप्रतिम है।
आचार्य रामचंद्र शुक्ल तथा बाबू गुलाब रॉय ने भक्ति आंदोलन को पराजित मनोवृत्ति का परिणाम तथा मुस्लिम राज्य की प्रतिष्ठा की प्रतिक्रिया माना है।

आचार्य शुक्ल लिखतें हैं कि "अपने पौरुष से हताश जाति के लिए भगवान की भक्ति और करुणा की ओर ध्यान ले जाने के अतिरिक्त दूसरा मार्ग ही क्या था।" बाबू गुलाबरॉय का मत है कि "मनोवैज्ञानिक तथ्य के अनुसार हार की मनोवृत्ति में दो बातें सम्भव हैं या तो अपनी आध्यात्मिक श्रेष्ठता दिखाना या भोग विलास में पड़ कर हार को भूल जाना।भक्तिकाल के लोगों में प्रथम प्रकार की प्रवृत्ति पाई गई है।" आचार्य शुक्ल जी की भांति डॉ रामकुमार वर्मा ने भी भक्ति आंदोलन को बाह्य आक्रमण की प्रतिक्रिया का परिणाम माना है। उन्होंने लिखा है कि —"हिंदुओं में मुसलमानों से लोहा लेने की शक्ति नहीं थी।इस असहाय अवस्था में उनके पास ईश्वर से प्रार्थना करने के अतिरिक्त कोई साधन नहीं था।"

अपने'रहस्यवाद' शीर्षक निबंध में जयशंकर प्रसाद ने इस स्थिति की व्याख्या इस प्रकार की है-"दुःखवाद जिस मननशील का फल था,वह बुद्धि या विवेक के आधार पर, तर्कों के आश्रय में बढ़ती ही रही।अनात्मवाद की प्रतिक्रिया होनी ही चाहिए।फलतः पिछले काल में भारत के दार्शनिक अनात्मवादी ही भक्तिवादी बने और बुद्धिवाद का विकास भक्ति के रूप में हुआ।" फिर व्यंग्य की मुद्रा में आगे कहते हैं कि "जिन -जिन लोगों में आत्मविश्वास नहीं था,उन्हें एक त्राणकारी की आवश्यकता हुई।"कवि प्रसाद की व्याख्या आलोचक आचार्य रामचंद्र शुक्ल जी के दृष्टिकोण से एक स्तर पर जुड़ जाती है।

कतिपय पाश्चात्य विद्वानों ने भी भारतीय धर्म साधना में भक्ति का उदय कब हुआ और क्यों हुआ,इस विषय पर अपने विचार व्यक्त किए हैं।पाश्चात्य विद्वान ग्रियर्सन, वेवर,कीथ और विल्सन आदि ने भक्ति को ईसाई धर्म की देन कहा है। ग्रियर्सन कहते हैं कि ईसा की दूसरी-तीसरी शताब्दी में कुछ ईसाई मद्रास आकर बस गए थे, जिनके प्रभाव से भक्ति का उदय हुआ था। विल्सन ने भक्ति को अर्वाचीन युग की वस्तु सिद्ध करते हुए कहा कि विभिन्न आचार्यों ने अपनी प्रतिष्ठा के लिए इसका प्रचार किया।एक अन्य पाश्चात्य विद्वान ने कृष्ण को क्राइस्ट का रूपांतर कहकर अपनी कल्पना भक्ति का परिचय दिया था।इसके साथ ही डॉ ताराचंद और आविद हुसैन अरबों का प्रभाव स्वीकार किया है।11वीं और 12वीं सदी में सूफ़ियों का भारत आगमन हुआ।इनके यहाँ प्रेम सर्वोपरि है।प्रेम के सहारे से व्यक्ति खुदा तक पहुँच सकता है।इसी कारण भक्ति उभरी।यह अरबों का प्रभाव है।लौकिक प्रेम से अलौकिक प्रेम तक पहुँचने के कारण यह सूफियों का मत है।

अस्तु, हमारे भारतीय विद्वानों श्री बालगंगाधर तिलक,श्री कृष्ण स्वामी आयंगर और डॉ एच. राय. चौधरी ने उपर्युक्त विद्वानों के उक्त मतों का युक्तियुक्त खंडन करते हुए भक्ति का मूलोद्गम प्राचीन भारतीय स्रोतों से सिद्ध किया है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी हिंदी साहित्य में भक्ति के उदय की कहानी को न तो पराजित मनोवृत्ति का परिणाम मानते हैं और न ही इसे मुस्लिम राज्य की प्रतिष्ठा की प्रतिक्रिया ।उनका कहना है कि "यह बात अत्यंत उपहासास्पद है कि जब मुसलमान लोग उत्तर भारत के मंदिर तोड़ रहे थे तो उसी समय अपेक्षाकृत निरापद दक्षिण में भक्त लोगों ने भगवान की शरणागति की प्रार्थना की।मुसलमानों के अत्याचार से यदि भक्ति की भावधारा को उमड़ना था तो पहले उसे सिंध में और फिर उसे उत्तर भारत में प्रकट होना चाहिए था, पर हुई दक्षिण में।"यदि मुसलमान शासकों के बलात इस्लाम प्रचार की प्रतिक्रिया के रूप में भारत में भक्ति का उदय हुआ तो उसी समय एशिया और यूरोप के अन्य देशों में भी समान पद्धति से इस्लाम का प्रचार किया गया, तब वहां भी भक्ति का उदय होना चाहिए था पर हुआ नहीं ।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी बाबू गुलाबराय के मत का खंडन करते हुए लिखते हैं कि "कुछ विद्वानों ने इस भक्ति आंदोलन को हारी हुई हिन्दू जाति की असहाय चित्त की प्रतिक्रिया के रुप में बताया है।यह ठीक नहीं है, प्रतिक्रिया तो जातिगत कठोरता और धर्मगत-संकीर्णता के रूप में प्रकट हुई थी।उस जातिगत कठोरता का एक परिणाम यह भी हुआ कि इस काल में हिंदुओं में वैरागी साधुओं की विशाल वाहिनी खड़ी हो गई क्योंकि जाति के कठोर शिकंजे से निकल भागने का एकमात्र उपाय साधु हो जाना रह गया था।भक्ति मतवाद ने इस अवस्था को संभाला और हिंदुओं में नवीन और उदार आशावादी दृष्टि प्रतिष्ठित की।"

आचार्य द्विवेदी भक्ति पर ईसाई प्रभाव की चर्चा करते हुए लिखते हैं कि "इस प्रकार के अवतारवाद का जो रूप है उस पर महायान सम्प्रदाय का विशेष प्रभाव है।यह बात नहीं कि प्राचीन हिन्दू चिंतन के साथ उसका सम्बन्ध एकदम है ही नहीं, सूरदास, तुलसीदास आदि भक्तों में उसका जो स्वरूप पाया जाता है वह प्राचीन चिंतनों की धारा से युक्त है।एक जमाने में ग्रियर्सन, केनेडी आदि ने पाश्चात्य विचार दर्शन की श्रेष्ठता प्रतिपादित करते हुए उसमें ईसाईपन का आभास पाया था।उनकी समझ में नहीं आ सका कि ईसाई धर्म से इतर ऐसे भाव कहीं और मिल सकते हैं।लेकिन आज शोध की दुनिया बदल चुकी है।ईसाई धर्म में जो भक्तिवाद है वही महायानियों की देन सिद्ध हो चला है क्योंकि ऐसे बौद्धों का अस्तित्व एशिया की पश्चिमी सीमा में सिद्ध हो चुका है और कुछ पंडित तो इस प्रकार के प्रमाण पाने का दावा करने लगे हैं कि स्वंम ईसा मसीह भारत के उत्तरी प्रदेशों में आए और बौद्ध धर्म में दीक्षित

भी हुए थे।"

कुछ आलोचकों ने आचार्य शुक्ल की दृष्टि को सांप्रदायिक दृष्टि कहा है।लेकिन उनकी दृष्टि साम्प्रदायिक नहीं है।वह तो परिस्थितियों को महत्त्व देते हैं।इसके साथ ही इन्होंने रसखान और जायसी की प्रशंसा की।आचार्य शुक्ल कहते हैं कि "कट्टर मौलवियों की बात और है जहां तक साधारण जनता की बात है तो वह राम और रहीम की एकता पहचानने लगी थी और एक दूसरे के करीब आने लगी थी।" आचार्य शुक्ल ने कबीर के बारे में कहा है कि बड़े ठीक समय में कबीर ने निम्न वर्ग के अंदर हौसला दिया।इसके अलावा जायसी के नागमती की विरह यातना में हिन्दू गृहणी का दर्शन देखते हैं।ऐसे में आचार्य शुक्ल को सांप्रदायिक कहना उचित नहीं है।

आचार्य शुक्ल ने परिस्थितियों को जरूर महत्त्व दिया लेकिन अपनी इसी दृष्टि के अनरूप हताशा, निराशा के आधार पर वह भक्ति आंदोलन के कवियों का मूल्यांकन नहीं किया।

डॉ रामस्वरूप चतुर्वेदी भक्तिकाल के उदय के संदर्भ में लिखते हैं कि समाज के सभी वर्गों की क्रिया-प्रतिक्रिया पर ध्यान रखने के कारण रामचंद्र शुक्ल के लिए इस्लाम का आगमन उनके विवेचन में गुणात्मक महत्त्व रखता है, जबकि हजारी प्रसाद द्विवेदी लोक को केंद्र में रखते हैं जहां इस्लाम का प्रभाव और उसके लिए क्रिया-प्रतिक्रिया उतना महत्त्व नहीं रखती,वह केंद्र में नहीं हाशिए पर है, रुपये में बारह आना(आज का पचहत्तर पैसा) नहीं, चार आना हो तो हो।

वहीं डॉ बच्चन सिंह भक्तिकाल के बारे में लिखते हैं कि शुक्ल जी के कथन को पुर्णतः मान लेने पर भक्तिकाल खंडित हो जाएगा। संत काव्य और सूफी काव्य उनके सैद्धांतिक दायरे से बाहर हो जायेंगे।द्विवेदी जी का कथन भी अर्धसत्य ही है।यदि मुसलमान न आये होते तो न सन्त काव्य लिखा जाता और न सूफी काव्य।

डॉ सत्येंद्र ने भक्ति का उद्भव द्रविडों से मानते हैं।वे लिखते हैं कि"भक्ति द्राविड़ उपजी लाये रामानन्द" इस उक्ति के अनुसार भक्ति का आविर्भाव द्रविडों में हुआ।दक्षिण भारत में अलवार संत हुए (जिनकी संख्या बारह मानी जाती है)जिन्होंने शंकर के अद्वैतवाद की कोई परवाह न करते हुए भक्ति की धारा को प्रवाहमान रखा।10वी-11वी शती में आचार्य नाथमुनि हुए,जिन्होंने वैष्णवों का संगठन, आलवारों के भक्तिपूर्ण गीतों का संग्रह, मंदिरों में कीर्तन एवं वैष्णव सिद्धान्तों की दार्शनिक व्याख्या आदि महत्वपूर्ण कार्य किए जिससे भक्ति परम्परा को नया बल मिला।इनके उत्तराधिकारियों में रामानुजाचार्य हुए जिन्होंने विशिष्टाद्वैत की स्थापना की ।उन्होंने भगवान विष्णु की उपासना पर बल दिया और दास्य भाव की भक्ति का प्रचार किया।इसी परम्परा में रामानन्द हुए,जिन्होंने राम को अवतार मानकर उत्तर भारत में रामभक्ति का प्रवर्तन किया।डॉ विश्वनाथ त्रिपाठी इस बारे में कहते हैं कि "रामानुजाचार्य ने उसे लोकोन्मुख बनाकर दार्शनिक-वैचारिक आधार दिया और रामानन्द के व्यक्तित्व से वह उत्तर भारत में आंदोलन और साहित्य का स्रोत बनी।"

दूसरी ओर अद्वैतवाद के प्रवर्तक मध्वाचार्य, द्वैताद्वैतवाद के संस्थापक निम्बार्काचार्य और शुद्धाद्वैतवाद के प्रतिष्ठापक बल्लभाचार्य हुए।मध्वाचार्य ने शंकर के मायावाद का खंडन करके विष्णु की भक्ति का प्रचार किया।निम्बार्क ने लक्ष्मी और विष्णु के स्थान पर राधा और कृष्ण की भक्ति का प्रचार किया।वल्लभाचार्य ने बालक कृष्ण की उपासना पर बल दिया और पुष्टिमार्ग का प्रवर्तन किया।चैतन्य महाप्रभु चैतन्य सम्प्रदाय के,स्वामी हरिदास सखी सम्प्रदाय के और हितहरिवंश राधाबल्लभ सम्प्रदाय और शुद्धाद्वैतवाद के प्रतिष्ठापक वल्लभाचार्य हुए।मध्वाचार्य ने राधावल्लभ सम्प्रदाय के द्वारा कृष्ण-भक्ति में माधुर्य-भाव का प्रचार किया। सूरदास इसी परम्परा के एक समुज्ज्वल रत्न हैं जिन्होंने अपने हृदय की समस्त सात्विकता कृष्ण के गुणगान में उड़ेल दी।

कुछ विद्वानों ने भक्तिकाल के उदय में सामाजिक और आर्थिक प्रभाव भी देखा है।जिनमें इरफान हबीब, के. दामोदरन और मुक्तिबोध मुख्य हैं।

इरफान हबीब लिखते हैं कि "तुर्कों के आने के बाद मध्यकाल में प्रौद्योगिकी का विकास हुआ। सिचाई, सैन्य उपकरण, वस्त्र तकनीक, कागज,घुड़सवारी आदि की तकनीकी का विकास हुआ।जिससे कृषि और शिल्प का विकास हुआ।जिससे व्यापार बढ़ा साथ ही नीची जातियों को ऊपर उठने और आत्मगौरव का भाव आया।"

के. दामोदरन ने माना कि "भक्ति आंदोलन सामन्तवाद के खिलाफ दस्तकारों व शिल्पकारों का आंदोलन है।"

मुक्तिबोध मानते हैं कि"निम्न संतों की धारा का योगदान ज्यादा है।जो बाद में उच्चवर्णों का प्रभाव बढ़ जाने से यह अपनी ताप खो बैठा।"

भक्तिकाल के उदय को देखें तो इतना बड़ा आंदोलन जो उत्तर से दक्षिण तक फैला ।उसमें गहराई बहुत ज्यादा थी। अतः इस आंदोलन के उदय में कोई एक कारण जिम्मेदार नहीं था।

अंत मे कह सकते हैं कि भक्ति बिरवा न विदेश से लाया गया न तो यह निराशा प्रवृत्तिजन्य है और न ही किसी प्रतिक्रिया का फल।वस्तुतः यह एक प्राचीन दर्शन-प्रवाह और प्राचीन सांस्कृतिक परम्परा की एक अविच्छिन्न धारा है।इस धारा का प्रस्फुटन आकस्मिक नहीं

हुआ।आचार्य रामचंद्र शुक्ल भक्तिकाल के संदर्भ में लिखते हैं कि"अस्सी प्रतिशत भारतीय संस्कृति का रूप भक्ति आंदोलन में है"

सन्दर्भ ग्रंथ

1. हिंदी साहित्य का इतिहास/आचार्य रामचंद्र शुक्ल । (34वां संस्करण संवत 2056) पृष्ठ संख्या 34।
2. हिंदी साहित्य का सुबोध इतिहास/बाबू गुलाबराय। (अष्टमसंस्करण 1947) पृष्ठ संख्या-24।
3. हिंदी साहित्य. उद्भव और विकास/आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी (छठा राजकमल संस्करण 1990) पृष्ठ संख्या 59।
4. भक्ति आंदोलन और भक्ति काव्य/शिवकुमार मिश्र (परिवर्द्धित संस्करण 2001) पृष्ठ संख्या 16।
5. हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास/डॉ रामस्वरूप चतुर्वेदी। (बाइसवें संस्करण का पुनर्मुद्रण, 1015) पृष्ठ संख्या 34।
6. हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास/डॉ बच्चन सिंह (प्रथम संस्करण, 1996) पृष्ठ संख्या 81।
7. हिंदी साहित्य का सरल इतिहास/डॉ विश्वनाथ त्रिपाठी। (प्रथम ओरियंट ब्लैकस्वान संस्करण 2010) पृष्ठ संख्या 13-14।
8. हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास/डॉ रामकुमार वर्मा (चतुर्थ संस्करण, 1958) पृष्ठ संख्या 192।
9. काव्यऔर कला तथाअन्य निबंध(1939ई) में संकलित'रहस्यवाद'निबंध/जयशंकर प्रसाद (पृष्ठ संख्या 7-8।